"क्या मुझे खरीदोगे"–स्त्री अस्तित्व का संघर्ष

Dr. K. Madhavi
Associate Professor of Hindi
Govt. Degree collage
Ibrahimpatnam
Mo.No. 9912838898

शोध सार :

"क्या मुझे खरीदोगे" उपन्यास मुंबई जैसे महानगरों में महिलाओं पर हो रहे यौन शोषण की दास्तान है। सदियों से स्त्री को अलंकृत वस्तु व भोग्या के रूप में ही देखा जा रहा है। इस उपन्यास में भी नायिका सरिता ने जीवन के थपेड़ों में, अंधेरे, गुमनाम गलियों में धक्के–खाते हुए भी स्वयं को बिखरने नहीं दिया। अपने अस्तित्व के लिए सदा संघर्षरत रहती है। हमारे विराट संस्कृति में कई परिवर्तन हुए। परंतु स्त्री–पुरुष के बीच की स्थिति आज भी वैसे ही है, जिसमें शोषण भी है और आंदोलन भी। सरिता को प्रेम के नाम पर धोखा मिलता है, फिर भी वह स्वयं को संभालने का प्रयास करते हुए, अपने भीतर के सुख–दुख को संजोती है। जीवन के हर मोड़ पर कोई–न–कोई रिश्ता मिल जाता है। पर हर रिश्ते का अपना स्वार्थ होता है। सरिता को भी हर मोड़ पर सागर, रमेश शर्मा आदि कई मिले। किन्तु उसके भीतर की जद्दोजहद उसे चैन लेने नहीं देती। अपने अस्मिता के लिए संघर्ष करते हुए जीवन में आगे बढ़ती है।

बीज शब्द : मोहनदास नैमिशराय– रचनाएँ– क्या मुझे खरीदोगे– सामाजिक उपन्यास–स्त्री अस्तित्व आदि।

स्त्री, श्रद्धा एवं शक्ति का प्रतीक मानी जाती थी। पर वही स्त्री आज वेदना एवं कुण्ठा का प्रतीक बन गई है। मर्यादा के आड़ में स्त्री को दबाकर रखा जा रहा है। सदियों से ही स्त्री को भोग्या के रूप में देखा जा रहा है। मोहनदास नैमिशराय का उपन्यास "क्या मुझे खरीदोगे" में स्त्री संघर्ष व अंतर्द्वन्द्व का यथार्थ चित्रण हुआ है।

मोहनदास नैमिशराय जी हिंदी दलित साहित्य के प्रसिद्ध रचनाकार हैं। आप पर बाबा साहेब अम्बेडकर जी का प्रभाव अधिक था। अम्बेडकरवादी सिद्धांतों से प्रेरित होकर कई रचनाओं का सृजन किया। "बाबा साहेब ने कहा था", "डॉ. अम्बेडकर और उनके संस्मरण", "अम्बेडकर डायरेक्टरी", "स्वतंत्रता संग्राम के दलित कहानियाँ", "झलकारी बाई" (उपन्यास) "मुक्ति पर्व" (उपन्यास) आदि प्रसिद्ध रचनाओं के प्रणेता हैं।

"क्या मुझे खरीदोगे" उपन्यास के संबंध में लेखक ने लिखा है कि– "कोई भी औरत पुरुष के आगे क्यों बिके? मेरे भीतर मंथन होता था। ऐसे समय में परंपराओं के खिलाफ विद्रोह करता था। विद्रोह की जमीन मेरे भीतर तैयार भी हो रही थी। मेरे भीतर लिखने से अधिक पढ़ने की चाह थी। पढ़ना केवल किताबी नहीं, बल्कि ऐसी महिलाओं के नजदीक जाकर पढ़ना। उसी से उनके सुख–दुख के रंगों को अपने भीतर उतारता रहा।"

युग बदले। नवीन संशोधनों व आविष्कारों से मानव जीवन में कई क्रांतिकारी परिवर्तन हुए, किन्तु स्त्री तब भी पुरुषों के हाथ की कठपुतली थी, आज भी है। बाज़ार में हर चीज बिकती है। हर चीज़ का अपना एक मूल्य होता है, लेकिन स्त्री का जिस्म आज भी बाज़ार में बिकता है।

उपन्यास के आरंभ में मुंबई की बदनाम गलियाँ जो लालबत्ती के नाम से जानी जाती है, उनका चित्रण करते हुए मोहनदास नैमिशराय लिखते हैं कि– "सदियों से मुंबई में नारी का बिकना मजबूरी रही है और पुरुष का खरीदना विवशता।----बाजारू भाषा में बदनाम अड्डों को लालबत्ती क्षेत्र भी कहा जाता है।"[1]

उपन्यास की नायिका सरिता भीम बस्ती में अपनी माँ, दमयंती के साथ रहती थी। सरिता, कॉलेज़ में पढ़ रही थी। पिता के गुजर जाने के बाद दमयंती ने बेटी की देख–रेख में कोई कसर न छोड़ी। सरिता, अपने सहपाठी सागर से प्रेम करती है। हर दिन वह सागर से मिलती और उसके प्रेम के आगोश में खो जाती। तब भी सरिता, घर पर देर से पहुँचती, माँ उसे स्त्री की नियति व समाज की स्थिति को समझाते हुए कहती हैं कि–

"सरिता, न जाने कभी–कभी मुझे डर–सा लगता है। दमयंती गंभीरता बनाए रखते हुए बोली। डर लगता है। पर किससे?" स्वर में आश्चर्य था उसके प्रश्न का जवाब दिया था माँ ने,

"इस दुनिया से।

"पर माँ जमाना बदल चुका है।" सरिता ने नए जमाने की दलील देते हुए कहा। "जमाना चाहे कितना भी क्यूँ न बदल जाएँ औरत की नियति नहीं बदला करती।"[2]

प्रेम, पवित्र भावना है। जिसमें समर्पण, त्याग, निस्वार्थता एवं विश्वास निहित होते हैं, किन्तु आज का प्रेम, मात्र आकर्षण व संभोग का ज़रिया बन गया है।

उपन्यास की नायिका सरिता, कॉलेज में सागर नामक लड़के से प्रेम करती थी। सागर, भी सरिता को चाहता था।

"सरिता, मैं तुम्हारे इतना करीब आ गया हूँ कि अब प्यास लिए वापस लौटने को मन नहीं करता।"[3]

किन्तु जब सरिता अपने रिश्ते को नाम देना चाहती थी, तब सागर कहता है कि–

"सरिता, देखो मुझे गलत मत समझना। मैं तुमसे शादी करूँगा, अवश्य ही। लेकिन यहाँ नहीं।

"पर क्यूँ नहीं सागर?"

"इसलिए कि यह समाज, यह दुनिया हमें चैन से यहाँ रहने न देगी। माना कि तुम्हारे घरवाले तैयार हो जायेंगे, पर मेरा परिवार कभी भी तुम्हें अपने घर की बहू स्वीकार न कर सकेगा।

इसलिए कि जिस जाति से तुम हो, उस जाति की बहू को वे अपने घर में सहन नहीं कर पाएँगे।"[4]

सागर की बातों को सुनकर, सरिता अचरज में पड़ जाती है। सरिता को लगा कि सागर जो उच्च शिक्षित होते हुए भी जातीय अस्मिता पर आघात पहुँचाने का प्रयास करता है।

सरिता, अपने दिल की सारी बातें नीलम के साथ साझा करती थी। पर कुछ दिनों से सरिता बेचैन सी रहती थी। माँ के पूछने पर सरिता, टाल देती थी। सरिता, सागर के प्रेम में पूरी तरह डूब चुकी थी।

"सरिता, कुछ समझने की कोशिश मत करो।

"मेरे और अपने बीच प्यार भरे लम्हों को समझो वही हमारी दुनिया है।" मुझ पर विश्वास रखो सरिता।

"सागर चाहे जहाँ ले चलो। मैं तो तुम्हारी हूँ बस।"[5] सरिता, सागर के प्रेम में इतनी खो गई थी कि, उसने ना चाहते हुए भी घर छोड़कर सागर के साथ मुंबई में नया जीवन आरंभ करने का निर्णय ले

लिया। मुंबई जिसे सपनों की नगरी कहते है जो दिन के चहल–पहल में दौड़ता रहता है, वही शहर रात में शबाब में डूबा रहता है।

सरिता पहली बार मुंबई आई थी। पहले तो दोनों कुछ दिन मुंबई के एक होटल के कमरे में थे। एक सप्ताह के बाद जब दोनों दादर से चर्च गेट जाने के लिए रेलवे स्टेशन पहुँचे तो थे, लेकिन सागर ट्रेन चढ़ न सका। सरिता ने चर्च गेट पर काफी देर तक इंतेजार किया सागर का। पर सागर न चर्च गेट पर पहुँचा, ना दादर और ना ही होटल के कमरे में। प्यार और बफ़ा की बातें करने वाला सागर, सरिता को बीच मझदार में छोड़कर चला गया।

मुंबई को सपनों की नगरी कहते हैं। हर दिन हजारों लोग लाखों अरमानों को लिए अपने सपने साकार करने के लिए मुंबई आते हैं। उन्हीं में से एक था रमेश। रमेश लेखक था। कागज़ों पर सपने उतारता था। मुंबई आये चार वर्ष हो चुके थे, फिर भी रमेश के सपने अधूरे ही रहे। लिखना उसका शौक था, किन्तु वही रोजी–रोटी का ज़रिया बन गया।

रमेश कहानियाँ लिखता था। जो दो–चार पत्रिकाओं में छपी भी, किन्तु अब रमेश जो भी लिखता है, वह रमेश के नाम से नहीं, किसी प्रसिद्ध लेखक के नाम से बिकते थे।

लेखन भी व्यापार बन गया है। आज भी रमेश अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिए भटकता फिर रहा है।

मुंबई प्रवास के चौथे वर्ष में रमेश की मुलाकात 'शर्मा जी' नामक प्रकाशक से हुई थी। इन्होंने ही रमेश के दो उपन्यास छापे थे। निराशा से घिरे रमेश को एक दिन सरिता, सड़क पर नज़र आती है।

लेखक लिखते हैं– "मुंबई की शाम, अजीब मदस्त सी। जैसे केश खोले रूप लावण्य से लबालब किसी मूक आमंत्रण हो।"[6]

रात में मुंबई की सड़कों पर औरतों का खड़ा रहना आम बात थी। पर रमेश को सरिता उन औरतों की तरह नहीं दिखाई दी। इसलिए रमेश ने सरिता से बात करने की कोशिश की, तभी सरिता ने कहा कि–

"किसी को अपना समझकर घर छोड़ा। लेकिन अब न घर है और न वह।"[7]

रमेश, सरिता को दिलासा देते हुए, अपने घर चलने को कहता है। सरिता के मन में द्वंद्व उभरने लगा था। रमेश भी 'विश्वास' शब्द की दुहाई देते हुए अपने घर ले जाता है।

सरिता को भी कुछ नहीं सूझ रहा था। वह भी उसके साथ चली गई। सरिता और सागर के बीच धीरे–धीरे अजनबीपन धुँधला होने लगा। फिर भी सरिता को लगता है कि– "पुरुष ने आज तक बिखेरा ही है। पुरुष सब कुछ बिखेरता है। अपने आपको और साथ में दूसरों को भी।"[8]

धीरे–धीरे सरिता खुद को संभालने की कोशिश करने लगती है। तभी एक दिन रमेश के घर शर्मा जी आते हैं।

शर्मा कुशल व्यापारी थे। महाजनी सभ्यता के दाँव–पेंच भली–भाँति जानते थे। किताबों के आर्डर लेने से लेकर पेमेंट लेने तक मीरा को जरिया बनाया जाता था। जब रमेश के घर सरिता को देखकर परिचय पूछने पर सरिता कहती है कि– जी मैं उनकी पत्नी हूँ।"[9] कुछ समय के पश्चात् शर्मा जी कहने लगे कि–

"देखिए भाभी जी, हर पुरुष और महिला के मन के किसी कोने में लेखकीय संवेदना छुपी होती है। केवल उन संवेदनाओं को बाहर लाना ही तो होता है।"[10]

शर्मा जी की बात सुनकर सरिता अपने मन की अनुभूतियों को समेटते हुए कहानी लिखती हैं और उसे देने शर्मा जी के पास जाती है। घर लौटने के बाद रमेश के पूछने पर वह सारी बात बताती है। तभी रमेश सरिता को शर्मा से सावधान रहने को कहता है। पर सरिता समझ नहीं पाती। इस तरह रमेश के मना करने पर भी सरिता शर्मा से मिलने जाती है। इसी बात पर दोनों में बहस होती है–

"मेरे मना करने के बाद भी तुम शर्मा के यहाँ गईं।"

"यह क्यों नहीं कहते कि नारी को बाँधने की पुरुष की शुरू से ही आदत रही है। इसलिए कि वह उसे अपनी जागीर समझते हैं, अपनी गुलाम मानता है। उसकी आजादी को खत्म करने––––।"[11]

दोनों में वाद–विवाद चलने लगा। तभी

"सरिता, तुम अपनी गलती नहीं समझ पा रही हो?"

"मैंने कोई गलती नहीं की।"

"मैं अतीत नहीं चाहती। सिर्फ वर्तमान में जीना चाहती हूँ। आखिर मुझे भी तो जीने का हक है।"

"तो चली जाओ उसी शर्मा के पास। लगता है तुम्हें एक साथी की जरूरत नहीं किसी व्यापारी की चाह भर है।"[12]

आवेश में सरिता ने गलत कदम उठा लिया था। सरिता ने शर्मा जी का दरवाज़ा खटखटाया। शर्मा भी तो यही चाहता था, लेकिन तभी शर्मा को किसी काम से बाहर जाना था। सरिता को वहीं बैठने के लिए कहकर, वह चला जाता है।

तभी मीरा आती है। मीरा पिछले पाँच सालों से धंधा करती थी। शर्मा जी ने मीरा के ज़रिये अपना उल्लू सीधा करता था। मीरा, सरिता के चेहरे पर छायी उदासी को पढ़ने की कोशिश करते हुए, उसे अपने साथ धंधा करने की बात बताती है। – "मैं भी कभी तेरी तरह शरीर बेचने को गलत ही मानती थी, लेकिन मजबूरी में मुझे यह सब करना पड़ा। बेचना पड़ा अपने शरीर को, अपनी आत्मा को। नारी आखिर कब तक पुरुष का खिलौना बनी रहे, क्या पुरुष उसका खिलौना नहीं बन सकता?"[13]

मीरा के चले जाने के बाद शर्मा धोखे से कोल्ड में नशे की गोली मिलाकर सरिता को देता है। नशा टूटने पर पता चला कि उसके साथ धोखा हुआ। ना चाहते हुए भी सरिता को जिस्म बेचना पड़ा।

सरिता के जीवन में पहले सागर आया था और उसने अनगिनत बार सरिता को भोगा था। उसके बाद सरिता के जीवन में रमेश आया। दो महीनों के साथ में कई बार रमेश ने भी भोगा था। तीसरा पुरुष शर्मा चोर बनकर जबरन सरिता के देह को भोगा था। उसके उपरांत कई पुरुषों से संभोग किया किन्तु सरिता अब अतीत के कड़बे पलों से छुटकारा पाना चाहती थी। वह खुद के लिए, जीना चाहती थी। वह मुक्ति चाहती थी। इसी कश्मकश में सरिता को एक दिन मीरा मिलती है। सरिता, मीरा से कहती है कि– "मीरा जी, जो कार्य कुछ समय पूर्व तुम्हें करना चाहिए था। तुम न कर सकी। पर आज मैं कर रही हूँ। तुम्हीं ने तो कहा था। हमें पुरुष पर आधारित होकर नहीं रहना चाहिए। मैं स्वतंत्र होकर जीना चाहती हूँ।"[14]

सरिता के आत्म विश्वास को देखकर मीरा ने भी उसका साथ दिया।

निष्कर्ष :

यह उपन्यास स्त्री पर हो रहे यौन शोषण का यथार्थ चित्रण है। मोहनदास नैमिशराय जी का उपन्यास "क्या मुझे, खरीदोगे" मैं मानवीय संवेदनाओं एवं दुर्बलताओं का जो चित्रण किया है, उसे नकारा नहीं जा सकता। सभ्य कहलाने वाले अपने चेहरों पर मुखौटे लगाकर, इस देहवादी संस्कृति को बढ़ावा दे रहे हैं। यह हमारे समाज पर तमाचा है। आज हाशिये का समूचा समाज अपनी जबान खोलने लगा है। भविष्य के लिए यह अनिवार्य है।

संदर्भ सूची :

1. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 13, श्रीनटराज प्रकाशन
2. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 24–25 श्रीनटराज प्रकाशन
3. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 30, श्रीनटराज प्रकाशन
4. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 44, श्रीनटराज प्रकाशन
5. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 50, श्रीनटराज प्रकाशन
6. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 63, श्रीनटराज प्रकाशन
7. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 64, श्रीनटराज प्रकाशन
8. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 71, श्रीनटराज प्रकाशन
9. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 81, श्रीनटराज प्रकाशन
10. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 82, श्रीनटराज प्रकाशन
11. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 101, श्रीनटराज प्रकाशन
12. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 102, श्रीनटराज प्रकाशन
13. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 106, श्रीनटराज प्रकाशन
14. क्या मुझे खरीदोगे, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं. 119, श्रीनटराज प्रकाशन